© 2018 IJSRSET | Volume 4 | Issue 1 | Print ISSN: 2395-1990 | Online ISSN : 2394-4099

महिला उत्थान के प्रति गाँधीजी का दृष्टिकोण

राजेश कुमार
शोधार्थी
राजनीति विज्ञान विभाग
वीर कुवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा (बिहार)

धर्म भूमि भारत में मनीषियों ने समय–समय पर तत्युगीन जन–भावना के अनुकूल, जनमानस के मनःस्थिति को भाप कर संसार में जीवन यापन हेतु सदाचार के मार्ग को प्रमुखता प्रदान की फलतः जनसाधारण में ऐसे मनीषी अपने पवित्र क्रिया–कलापों द्वारा संत के रूप में प्रतिष्ठित हुए। महात्मा गाँधी भी ऐसे ही मनीषी थे जिन्होंने साधारण मानव से महामानव तक की यात्रा में अपने मन एवं शरीर पर बहुविध प्रयोग किए। महात्मा बुद्ध की भाँति गाँधी ने भी अपने युग को अभिनव दिशा प्रदान की। भारतीय राजनीति एवं स्वतंत्रता आंदोलन में इनका पदार्पण उस समय हुआ, जब राष्ट्रीय आंदोलन शनैः शनैः सशक्त होता जा रहा था। गाँधीजी के पदार्पण ने न केवल उसे वृहद शक्ति प्रदान की, वरन उसके स्वरूप को भी परिवर्तित किया। अपने बहुमुखी क्रिया कलापों से गाँधीजी ने अपने समय को इतना अधिक प्रभावित किया कि उस कालखण्ड (1920–1947 ई0) को उन्हीं के नाम पर गाँधी युग कहा जाने लगा। इस अवधि में सत्य, अहिंसा एवं भारतीय राष्ट्रीय एकता के अनिवार्य नियामक तत्वों पर विशेष बल दिया गया। इसके पूर्व भारत में जितने भी सामाजिक, धार्मिक, बौद्धिक आंदोलन हुए उनका प्रभाव समाज के एक छोटे वर्ग तक ही परिसीमित रहा परंतु गाँधीजी ने राष्ट्रीय आंदोलन को जनान्दोलन बनाया और उसे लोक से भी जोड़ा।[1]

हरिजनोद्धार, अस्पृश्यता, महिला कल्याण एवं मधनिषेध महात्मा गाँधी के जनान्दोलन के मुख्य अंग थे। इनके रहते स्वतंत्रता का रूप नकारात्मक ही होता क्योंकि राजनीतिक एकता, साम्प्रदायिक एकता एवं सद्भाव के अभाव में ह्रदय परिवर्तन असम्भव है। स्वराज्य का मूल हीन–से–हीन लोगों की आजादी है। गाँधीजी किसी को भी जन्मना अस्पृश्य नहीं मानते थे। उन्होंने जन्मना अछूत को राष्ट्रीय अभिशाप, हिन्दुत्व का कलंक और एक असत्य माना। सत्य के उपासक के लिए असत्य असहज था। ब्रिंटिश दासता की अपेक्षा इस अविवेकपूर्ण परंपरा को समाप्त करना उनकी दृष्टि में अत्यावश्यक था फलस्वरूप वे अस्पृश्यता रूपी बुराई से सदैव संधर्ष करते रहें और लोगों का इसके निर्मूलन के लिए आह्वान किया। उन्होंने सत्याग्रहाश्रम को हरिजन सेवा और अछूतोद्धार के कार्यक्रमों को संचालित करने के लिए अर्पित कर दिया। यही नही आत्मशुद्धि के लिए भी हरिजन सेवा को अपने कार्यक्रम का अंग बना दिया। महिला कल्याण के कार्यो पर अतिसय बल देकर उन्होंने नारी जगत के प्रति सबकी सहानुभूति को जागृत किया। गाँधीजी नारी को अहिंसा की प्रतिमूर्ति मानते थे, जिसका विकृत रूप उन्हें अभिप्रेय नहीं था। बाल विवाह का विरोध करके एवं विधवा विवाह को

मान्यता देकर जहाँ उन्होंने हिन्दू दृष्टिकोण में परिवर्तन लाने का प्रयास किया, वही उसे सामाजिक सुधार का अंग बनाया।[2]

गाँधीजी स्त्रियों की राजनीतिक और सामाजिक मुक्ति के उदघोषक थे। पर्दे की क्रूरता, बाल–विवाह के अन्याय, विधवा के पुनर्विवाह पर प्रतिबंध और वास्तव में हर उस बात के विरूद्ध उन्होंने आवाज उगई, जो भारतीय स्त्रियों को सीमित और संकुचित कर रही थी। भारत की कुछ बुद्धिमान और उदार महिलाएँ उनकी सहयागी रही और उनके आंदोलनों में आगे की पंक्ति में रहकर लड़ी। भारतीय स्त्रियों को उन्होंने उनकी अपनी प्रतिष्ठा और शक्ति के प्रति जागरूक बानाया। गाँधीजी ने पर्दा–प्रथा का विरोध किया और कहा ''पवित्रता स्त्रियों को बाहरी मर्यादाओं मे जकड़कर रखने से उत्पन्न होने वाली चीज नहीं है। उसकी रक्षा उन्हें पर्दे की दीवाल से घेरकर नहीं की जा सकती। उसकी उत्पति और विकास भीतर से होना चाहिए और उसकी कसौटी यह है कि वह पवित्रता किसी प्रलोभन से डिगे नहीं। इस कसौटी पर वह खरी सिद्ध हो तभी उसका कोई मूल्य माना जा सकाता है।''[3]

गाँधीजी इस बात से आश्वस्त थे कि महिलाएं अपनी पवित्रता के बारे में चिंतन करने में समर्थ हैं। पुरूषों को नाहक इस विषय में इतनी चिंता नहीं करनी चाहिए वे कहते है–स्त्रियों की पवित्रता के विषय में पुरूष इतनी चिंता क्यों दिखाते है क्या पुरूषों की पवित्रता के संबंध में स्त्रियों को तो कोई चिंता करते हुए नहीं सुनते। स्त्रियों के शील की पवित्रता के नियमन का अधिकार अपने हाथों में लेने की इच्छा पुरूषों को क्यों करनी चाहिए? पवित्रता कोई ऐसा चीज नहीं जो उपर से लादी जा सके। वह तो भीतर से विकसित होनेवाली और इसलिए वैयक्तिक प्रयत्न से सिद्ध होने वाली चीज है।''[4]

गाँधीजी 'दहेज प्रथा' का बहुत विरोध करते थे और उन्होने कॉलेज के छात्रों को इस बात के लिए बहुत फटकारा कि वे स्त्रियों को घर की दासी समझते है उन्हें इस बात का दुख था कि पुरूषों ने उन्हें अपने ह्रदय और घर की रानी मानने के बजाय उन्हें बिकले वाली वस्तु बना दिया है। पत्नी तो पुरूष की अर्धांगिनी कही गयी है।[5] अगर इस बुराई की जड़ से मिटाना है तो लड़के लड़कियों और उनके माँ–बाप की जाति का बंधन तोड़ना होगा। शादी की उम्र बढ़ानी होगी और योग्य वर नहीं मिला तो कुवांरी रहने का साहस भी करना पड़ेगा।[6] उनका कहना था कि ''यदि मेरी कोई लड़की है तो उसे मैं जीवनभर कुंवारी भले ही रखू लेकिन ऐसे पुरूष से विवाह नहीं करूंगा जो दहेज में एक कौड़ी भी मांगे।''[7] किसी भी समाज में स्त्रियों का उन्नत दशा उस समाज के विकास का धोतक माना जाता है। नारी को समाज में उँचा उठाने के लिए यह आवश्यक है कि दहेज की प्रथा समाप्त किया जाए। गाँधीजी का मानना है कि जब तक समाज में नारी को प्रतारित करने का सिलसिला चलता हरेगा तब तक समाज न तो प्रगति कर सकता है और न ही चेतनाशील बना रह सकेगा। उन्होने दहेज की कुप्रथा की समाप्ति हेतु निम्नलिखित सुझाव पेश किए है– [8]

1. कन्यागत ऐसा युवकों की उपेक्षा करें जो या तो स्वयं या जिनके माता पिता दहेज के लोभी हो।

2. दहेज की रस्म की निंदा करने वाला प्रचण्ड लोकमत तैयार किया जाना चाहिए और जो युवक इस तरह के पाप के पैसे से अपना हाथ गंदा करें उन्हें समाज से अलविदा कर देना चाहिए।
3. देश के शिक्षित युवकों विशेषकर अमीर माँ–बाप के बेटे यह सुनिश्चित करे कि अपनी शादी पर कोई अनावश्यक व्यय नहीं होने देंगें ताकि राष्ट्र के साधनों की बर्बादी को रोका जा सके।
4. माता–पिता को चाहिए कि वे अपनी कन्या को लड़कों के सदृश ही शिक्षा दे ताकि शिक्षित होकर वे अपने जीविका का दयित्व स्वयं ले सके। इससे वे व्यर्थ के सामाजिक दबाव व शोषण से बच सकेगी और वर के चुनाव में अपने माता–पिता को भी सहयोग दे सकेंगी।
5. कन्या के माता–पिता को अंग्रेजी डिग्रियों के प्रभाव से परहेज करना चाहिए, बेहतर होगा कि अपनी लड़की हेतु चरित्रवान वर ही ढूँढ़े।
6. जाति–पाति के बंधन तोड़े जाए ताकि चुनाव का क्षेत्र विस्तृत हो सके।

गाँधीजी के व्यक्तित्व की सबसे बड़ी विलक्षणता यह थी कि उनके वचन और कर्म में भेद नहीं था। उनके मुँह से उनकी आत्मा की आवाज मुरवरित होती थी और वे जो कहते वही करते थे। उल्लेखनीय है कि गाँधीजी के एक पुत्र का अन्तजार्तीय विवाह चक्रवती राजगोपालचारी की पुत्री के साथ संपन्न हुआ जबकि राजाजी एक उच्चकोटि के ब्राहाण थे और गाँधी जी वैश्य।[9]

गाँधी जी ने महिलाओं के उत्थान की ओर विशेष ध्यान केन्द्रित किया और उनके विकास के मार्ग में आने वाली सामाजिक और आवश्यक बाधाओं को दूर करने का प्रयास किया। स्त्रियों के विरूद्ध भेदभाव को उन्होने कालगति के विरूद्ध माना है। यंग इंडिया में उन्होंने लिखा–पत्नी पति की गुलाम नहीं, साथी है। वह उसकी साथी, अर्धांगिनी, सहचरी और मित्रा है। पति के अधिकार और कर्तव्य, दोनों में उसका बराबर का हिस्सा है। इसलिए उनकी जिम्मेदारियाँ एक दूसरे के प्रति और दुनिया के प्रति भी एक सी और पारस्परिक होनी चाहिए।[10]

इसके साथ ही उन्होंने महिलाओं को यह भी चेतावनी दी कि वे स्वयं अपने उपर निर्भर रहें और स्वयं अपनी उन्नति के लिए प्रयास करें क्योंकि जिस प्रकार हमें दूसरों की तपस्या से मोक्ष प्राप्त नहीं हो सकता उसी प्रकार पुरुषों के प्रयत्नों से स्त्रियों की स्थायी उन्नति नहीं हो सकेगी। स्त्रियों को अपनी संस्थाएँ चलाने और आन्दोलन करनेके लिए पुरुषों की सहायता अवश्य लेनी चाहिए परन्तु आत्मोनति हेतु उनको सर्वदा पुरुषों के प्रयत्नों पर ही निर्भर नहीं रहना चाहिए।[11]

गाँधी जी ने नारी को घर की चार दीवारी से बाहर निकलने को ही प्रेरित नहीं किया बल्कि उनके उदार विचारों ने भारतीय नारी की स्थिति को सुधारने में बहुत सहायता की। उन्होंने यह भी कहा कि स्त्री को अबला कहना उसे बदनाम करना है। ऐसा कहने का अर्थ अगर यह हो कि स्त्री में पुरुष जैसी पाशविक वृति नहीं है या उतनी मात्रा में नहीं है, जितनी कि पुरुष में होती है, तो यह आरोप माना जा सकता है। पर यह चीज तो स्त्री को पुरुष की अपेक्षा पुनीत बनाने वाली है और स्त्री पुरुष की अपेक्षा पुनीत है ही । वह अगर आधात करने में निर्बल है तो कष्ट सहन करने में बलवान हैं।

धैर्य और आत्म त्याग में तो नारियाँ स्वभावतः पुरुषों से आगे रहती है–नारी पुरुष से हीन नहीं है, बल्कि वह पुरुष की अपेक्षा महान ही है। आत्म–त्याग की अपनी शक्ति से, चुपचाप यंत्रणा सहने की क्षमता से, विनय से, विश्वास से, ज्ञान से। नारी की बोध शक्ति में वह प्रज्ञा है जो पुरुष के अहंकार में नही है।[12] स्त्री अहिंसा की मूर्ति है। अहिंसा का अर्थ है अनन्त प्रेम और उसका अर्थ है कष्ट सहने की अनंत शक्ति। पुरुष की माता स्त्री से बढ़कर इस शक्ति का परिचय अधिक से अधिक मात्रा में और किससे मिलता है।[13]

युद्ध में फंसी हुयी दुनिया आज शान्ति का अमृतपान करने के लिए तड़प रही है। यह शान्ति कला सिखाने का काम भगवान ने स्त्री को दिया है। वह सत्याग्रह में अगुआ बन सकती है, क्योंकि उसके लिए पुस्तकों से मिलने वाले ज्ञान की जरूरत नहीं होती है। उसके लिए तो तगड़ा दिल चाहिए जो कष्ट सहन और परिश्रम से बनता है। गाँधी जी ने कहा कि पुरुषों के समान महिलाओं को भी स्वराज्य प्राप्त करने के प्रयत्नों में भाग लेना होगा। मैं पूरी उम्मीद करता हूँ कि भारत की महिलाएँ इस चुनौती को स्वीकार कर अपने को संगठित करेगीं।[14] स्वदेशी धर्म का पालन करने में वे जितनी सहायता कर सकती हैं उतनी पुरुष नहीं कर सकते।[15] उनका विचार था कि स्वराज्य विजय में भारत की स्त्रियों का उतना ही हिस्सा होना चाहिए जितना पुरुषों का। यह भी सम्भव है कि इस शान्ति पूर्ण लड़ाई में स्त्री पुरुषों से बाजी मार ले जाये और उसे कोसों पीछे छोड़ दें। [16] गाँधी जी जैसा साहसिक पुरुष ही ऐसे साहसी कार्य का सुझाव दे सकता था। उनके अहिंसक संघर्ष का स्वरूप ऐसा था कि उसमें स्त्री और पुरुष समान रूप से भाग ले सकते थे। उनका कहना था कि स्त्रियाँ यह भूल सकें कि वे अबला हैं तो इसमें कोई सन्देह नहीं है कि युद्ध के विरोध में वे पुरुषों से कहीं अधिक अच्छा काम कर सकती है।

स्वतन्त्रता संग्राम में स्त्रियों ने उनका नेतृत्व बड़े उत्साह से स्वीकार किया। उनके आह्वान पर समाज के सभी वर्गों की शिक्षित, आशिक्षित, शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों की महिलाएँ आगे आयीं। यहाँ तक कि रूढ़िवादी परिवारों की वे महिलाएँ भी संघर्ष में सम्मिलित हुयीं जो कभी भी अपने घरों से बाहर नहीं निकलती थी। उनके परिवार के पुरुषों को यह विश्वास था कि गाँधी जी द्वारा चलाए गये अहिंसात्मक आन्दोलन में कोई भी उनका बाल बाका नहीं कर सकेगा। जो महिलाएँ बाह्य आंन्दोलन में भाग लेने न निकल सकीं, उन्होंने घर में सूत काटकर देश की सेवा की। गाँधीजी के प्रेरणादायक नेतृत्व में महिलाओं के स्वातन्त्रय संघर्ष में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। राजकुमारी अमृत कौर ने इस सम्बन्ध में लिखा है–भारत में नारी जागरण में योग दान देने वाला कोई घटक उतना शक्तिशाली नहीं हो सका है, जितना भारत में ब्रिटिश प्रभुत्व के विरूद्ध छिड़े संग्राम में गाँधी जी द्वारा प्रस्तुत किया गया अहिंसक कार्रवाई का क्षेत्र। इसने सैकड़ो–हजारों स्त्रियों को अपनी चार दीवारियों में घिरे घरों से निकाल कर अग्नि परीक्षा के सामने निर्भीकता पूर्वक खड़ा कर दिया। इसने इस तथ्य को पूर्णतया सिद्ध कर दिया कि स्त्रियाँ बुराई के आक्रमण का सामना करने में पुरुषों से किसी तरह पीछे नहीं हैं। सोचने वालों के लिए इसने यह भी सिद्ध कर दिया कि निःशसत्र प्रतिरोध किसी भी प्रकार से सशस्त्र विरोध से कम प्रभावकारी नहीं है–हर हालत में, जहाँ तक भारत की मुक्ति का सवाल था, स्त्री का स्थान सुनिश्चित कर दिया।

निष्कर्षतः हम यह कह सकते हैं कि गाँधी जी के उदार विचारों ने भारतीय नारी की स्थिति को सुधारने और उसमें चेतना जागृत करने में बहुत सहायता की। उन्होंने जो भी रचनात्मक कार्यक्रम चलाए और जो भी सामाजिक, आर्थिक और शैक्षणिक संस्थाएँ स्थापित की उनमें हमेशा स्त्रियों और पुरुषों को समान उत्तरदायित्व एवं स्थान प्राप्त हुआ। स्त्री के प्रति उनकी ऐसी निष्ठा और विश्वास की भावना थी कि उनके अधीन काम करते हुए स्त्रियों ने आत्म विश्वास एवं दृढ़ निश्चय के साथ गम्भीर दायित्वों के पालन की शिक्षा प्राप्त की। उन्होंने स्त्रियों में जो चेतना जागृत की, जो सम्मान और प्रोत्साहन दिया उससे वे हमेशा प्रगति पथ की ओर अग्रसर होती गयीं।

संदर्भ

1. डॉ0 जय कुमार मिश्रा (स0)–21 वीं सदी में महात्मा गाँधी की प्रासंगिकता प्रत्यूष पब्लिकेशन्स 2012 नई दिल्ली पृ0–4
2. उपर्युक्त, पृ0–7
3. सुरेन्द्र कुमार–नारी पुनरूत्थान में गाँधी एवं महिलाओं का वर्तमान स्वरूप, क्लासिकल पब्लिशिंग कम्पनी 2012 नई दिल्ली पृ0–11
4. उपर्युक्त, पृ0 वही
5. अनु बंधुपाध्याय–बहुरूपी गाँधी, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद 1971 नई दिल्ली पृ0–136
6. मोहनदास करमचन्द्र गाँधी–स्त्रियाँ और उनकी समस्याएँ, नवजीवन प्रकाशन 1959 अहमदाबाद, पृ0–4
7. अनु बंधोपाध्याय–बहुरूपी गाँधी, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद 1971 नई दिल्ली, पृ0–135
8. सुरेन्द्र कुमार–नारी पुनरूत्थान में गाँधी एवं महिलाओं का वर्तमान स्वरूप, क्लासिकल पब्लिशिंग कम्पनी 2012 नई दिल्ली पृ0–14
9. उपर्युक्त पृ0–वही
10. मोहनदास करमचन्द्र गाँधी–स्त्रियाँ और उनकी समस्याँ, नवजीवन प्रकाशन 1959 अहमदाबाद, पृ0–91
11. रामचन्द्र वर्मा–महात्मा गाँधी, गाँधी हिन्दी पुस्तक भंडार 1978 बम्बई पृ0–330–31
12. रोमा रोला–महात्मा गाँधी जीवन दर्शन, लोक भारती प्रकाशन, 1986 इलाहाबाद पृ0–58
13. आत्म संयम, महात्मा गाँधी के लेखों का संग्रह, सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन 1968 पृ0–366
14. एम0 के0 गाँधी–विमेन एण्ड सोशल इनजस्टिस, नवजीवन पब्लिशिंग हाउस 1947 अहमदाबाद पृ0–99
15. संपूर्ण गाँधी वांड़मय् खण्ड–21, पृ0–226
16. मोहनदास करमचन्द्र गाँधी–स्त्रियाँ और उनकी समस्याएँ, नवजीवन प्रकाशन 1959 अहमदाबाद पृ0–30